सखि साजन

आकांक्षा पारे काशीव

सखि साजन

'यह कहानी उतनी ही सच्ची जितने प्रेम में रतजगे। उतनी ही झूठी जितने प्रेम के कस्मे-वादे।'

उसकी डायरी का यह पहला वाक्य था। लिखावट खूबसूरत थी। इस वाक्य के बाद पूरा पन्ना लगभग कोरा था। कहीं-कहीं फूल-पत्ती और सितारे बनाए थे उसने। एक झोंपड़ीनुमा घर, घर से निकलता रास्ता, पहाड़, उगता सूरज और हाँ एक पेड़ और उस पर बैठी चिड़िया भी। पूरी डायरी में कभी नीली तो कभी हरी स्याही से उसने छोटी-छोटी इबारतें, शायरी लिख रखी थीं। बीच-बीच में वही फूल-पत्ती, माँडने, आड़ी-तिरछी लकीरों से गुदी सी थी वह डायरी। इन सबके बीच ही सुंदर लिखावट में दर्ज था उसका दर्द। दर्द जो मेरे अपने ने ही उसे दिया था। वह दर्द जिसकी मैं कल्पना नहीं कर सकती थी और जिसने दिया था वह चैन से थी। किसी भी बात के से बेखबर। मैं अब तक बेतरतीबी से उस डायरी को पढ़ रही थी। कभी आगे का हिस्सा तो कभी अचानक आखिरी पन्ना। कभी बीच का कोई हिस्सा। आधा वक्त तो उसकी अनूठी-अनगढ़ चित्रकारी पर नजर जमाए ही बीत जाता था। फिर ध्यान आता, मुझे तो डायरी पढ़ना है। उसके दर्द का साझीदार होना है। बहुत पहले कहीं पढ़ा था, ऐसी बेतरतीब चित्रकारी के बारे में। ऐसी चित्रकारी व्यक्ति के मनोभाव दिखाती है। कोई यूँ ही नहीं कागज पर गोदता रहता है। उथल-पुथल होती है मन में जो रोशनाई के सहारे कागज पर निकल आती है।

जब मन में दुविधा हो तब ही ऐसे चित्र निकलते हैं मन से बाहर। प्रदीप ने कहा था एक बार। कुछ लोगों में आदत होती है। कहीं भी कागज-कलम मिला नहीं कि लगे गोदने। आजकल के लोग जिसे गोदना नहीं डूडल कहना पसंद करते हैं। स्कूली बच्चों की कॉपी जैसी दिखती उस डायरी में बने चित्रों को मैं भी समझने की कोशिश कर रही थी। प्रदीप पढ़ते थे डूडल के मनोभावों को। बहुत रुचि थी प्रदीप की ऐसी बातों में। अकसर कहा करते थे, आदमी पूरी तरह खुल जाता है कुसुम। यदि कोई पाँच तरह के डूडल मेरे सामने बना दे न तो मैं फौरन बता सकता हूँ कि क्या चल रहा है सामने वाले के मन में। उसकी कौन सी इच्छाएँ दबी हैं मन में। मैंने याद करने की कोशिश की। जितना प्रदीप से जानती-सुनती आई थी। सितारे बनाने का मतलब होता है, आशा। खुद के जीवन से ऐसी आशा जो पूरी होना थोड़ी मुश्किल हो। हाँ मुश्किल आशाएँ ही तो पाल रखी थी उसने अपने मासूम मन में। मैंने पढ़ना शुरु किया, "सलेटी रंग के आसमान के एक टुकड़े ने मेरी बालकनी से झाँका और मुझे बताया कि उसके आने का वक्त हो गया है। मैंने सोचा खुद व्यवस्थित कर लूँ। थोड़ा कमरा सँवार लूँ। वैसे इसका उलट भी हो सकता था। मैं थोड़ा सँवर लेती और कमरा थोड़ा व्यवस्थित कर लेती। पर मुझे सँवरने का शौक कभी रहा नहीं। तब भी नहीं जब सँवरने की उम्र रहती है। आईने के सामने खड़ा होना अच्छा लगता है।

पर पता नहीं उसमें क्या है। उसके आने से पहले मुझे व्यवस्थित हो जाना अच्छा लगता है। चाहे मैं दफ्तर से कितनी भी थक कर आऊँ। चाहे मेरा मन कितना भी अलसाने का करे, मैं उसके आने से पहले मुँह-हाथ धो लेती हूँ। चेहरे पर थोड़ी रौनक ले आती हूँ और इंतजार करती हूँ कि वह चहकती सी कमरे में दाखिल होगी और पूरा कमरा उसकी चहचहाट से भर जाएगा। पहले मुझे बड़ा अजीब लगता था उसका साथ। कितना बोलती है। एक मिनट चुप नहीं रहती। पिछले चार साल से मैं इसी कमरे में हूँ। लेकिन इससे पहले कभी इतनी रौनक नहीं रही। अब तो जब देखो कोई न कोई उससे मिलने आता रहता है। कमरा हमेशा भरा-भरा सा रहता है। मुझे जबर्दस्ती बातचीत में घसीट लेती है वह। क्यों सोनाली तुम्हारे यहाँ ऐसा होता है क्या, क्यों सोनाली तुम कभी वहाँ गई हो क्या, क्यों सोनाली तुम्हें यह पसंद है क्या। जब भी कमरे में रहती है, सोनाली, सोनाली करती रहती है। उससे पहले तो मुझे पता ही नहीं था कि घर किसे कहते हैं और घर का प्यार क्या होता है। वह मेरा बहुत खयाल रखती है। मुझे बहुत अच्छा लगता है।'

ओह तो उसका नाम सोनाली था। कितना आश्चर्य है, मैंने उसके सैकड़ों संगी-साथियों के नाम सुने हैं लेकिन यह नाम कभी नहीं सुना। क्या बच्चे इतना कुछ छुपाते हैं अपने माँ-बाप से। खासकर माँ से। माँएँ तो दोस्त होती हैं न। दोस्त? मैंने खुद से प्रश्न किया। दोस्ती तो सिर्फ किताबों में ही दिखाते हैं बच्चों और माँ की। अखबार के फीचर पन्नों तक ही सिमटी हुई है यह दोस्ती। पता नहीं कुछ माएँ होती होंगी इतनी भाग्यशाली कि उनके बच्चे उनके दोस्त रहते होंगे। लेकिन यह बात तो दोस्तों को बताने लायक भी नहीं है। क्या कोई अपने किसी दोस्त को बता सकता है, कि उसने... कि वह...। आगे मैं सोच ही नहीं पाई। शायद सोचने की हिम्मत नहीं जुटा पाई। खुद को नए जमाने की मानती आई हूँ। पर यह नयापन मेरे गले में फँस गया था। न रुलाई फूटती थी न आवाज। यह बेवफाई थी, अपराध था, किसी का शोषण था, किसी की मजबूरी का फायदा था, क्या था आखिर यह। अगर मैं यह तय भी कर लेती तो क्या फर्क पड़ना था। इसकी सुनवाई तो अब कहीं नहीं हो सकती थी।

मेरा मन घबरा रहा था। मैंने आहिस्ता से डायरी बंद की और बालकनी में चली आई। इस अनजान महानगर में बालकनी का यह कोना ही मेरा अपना था। जहाँ नजर जाती थी बस ऊँची-ऊँची इमारतें ही दिखाई देती थीं। तीसरी मंजिल के इस फ्लैट में पाँच कमरों के इस मकान में हम तीन लोग रहते हैं। मकान मैंने इसलिए कहा कि घर बनने के लिए इसे लंबा रास्ता तय करना है। जब मैं बालकनी से झाँकती तो लगता, सीमेंट के पेड़ ऊग आए हैं। ऊँची इमारतों की छोटी-छोटी खिड़कियाँ दिखतीं और रात होते ही

सफेद पीली रोशनी से रोशन हो जातीं। देर रात तक कुछ खिड़कियाँ रोशन रहतीं और अँधेरे में इन्हीं रोशन खिड़कियों के सहारे कई बार मेरी रात कट जाती। यदि कभी वह मुझे जागते हुए पाती तो प्रेम से पूछने के बजाय हमेशा डपट देती, "सो जाओ वरना बीमार पड़ जाओगी। फिर मुझे आफिस से छुट्टी ले कर तुम्हारी देखभाल करनी पड़ेगी।" नींद नहीं आती क्या करूँ। अब यह जवाब देकर भी मैं थक गई थी। तुम्हारी चिंता सताती है यह तो मैं बोलना ही भूल गई थी। ऐसा बोल कर मैं और चार बातें सुनना नहीं चाहती थी। मैं जानती थी ऐसा कहने पर वह बिफर पड़ेगी और किसी भी बात का चीख कर ही जवाब देगी। मैं कई बार उसकी चिल्लाहट या बौखलाहट में अपनी गुम हो गई बेटी खोजना चाहती थी। लेकिन मैं जितना इसका प्रयास करती उतता ही खुद को असहाय मानने लगी थी। सच तो कहती है वह। मैं उसकी मदद के लिए यहाँ हूँ। यदि बीमार पड़ गई तो वह अपने डॉक्टर के पास दौड़ेगी या मेरे।

यह सब मैं तब सोचती थी जब तक मैंने वह डायरी नहीं पढ़ी थी। उस डायरी के बाद मेरा भी मन करने लगा था उस पर चीखूँ, चिल्लाऊँ। झिंझोड़ कर पूछूँ, क्या कमी थी हमारे पालन-पोषण में कि तुमने इतनी बड़ी हरकत की। अपराध उसका था, पर घुट मैं रही थी। शायद उसे अंदाजा भी नहीं था कि उसने एक जीवन ले लिया है। मैं उससे झगड़ना नहीं चाहती थी, बहुत मुश्किल से वह एक जीवन देने के काबिल बनी थी। नए जीवन की राह में जरा भी तनाव परेशानी खड़ा कर सकता है, उसके डॉक्टर ने चेतावनी की तरह यह बात मुझसे कही थी। बहुत सावधानी रखना थी उसे भी।

मुझे भी खुशी थी पाँच कमरों का वह मकान घर बनने जा रहा था। शादी के दस साल बाद उसके शरीर का आकार बढ़ रहा था। उसका हर दिन बढ़ता आकार मुझमें भी नई उम्मीद जगा देता था। बहुत दिनों बाद आज वह दफ्तर गई थी। उसके जाते ही मैंने अलमारी से हल्की जामुनी रंग की वह डायरी निकाल ली। अभी कितना कुछ बाकी था। कितना कुछ था जो मुझे जानना था और समझने की कोशिश करनी थी। उसने लिखा था, "लाल रंग से अक्षर सुंदर आते हैं। पर बेला कहती है, दुश्मनों के लिए लाल रंग इस्तेमाल किया जाता है। मैं तो दोस्त के लिए लिख रही हूँ। बल्कि दोस्त से बढ़ कर है वह। वह मुझे अच्छी लगती है। मैं उसकी तरह होना चाहती हूँ। उतनी ही जिंदादिल, उतनी ही हँसमुख। वह कैसे बातों-बातों में दूसरों को अपना बना लेती है। वह मुझे काली स्याही से भी नहीं लिखने देती। कहती है, काली स्याही से लिखने पर जीवन में संघर्ष बढ़ जाता है। वैसे ही क्या कम संघर्ष है तुम्हारे जीवन में। वह पहली लड़की है जिसे मैंने बताया है कि मेरे पापा हमारे साथ नहीं रहते। हमारे यानी ममा के साथ। स्कूल में मैं सब को यही बताती हूँ कि पापा गल्फ में जॉब करते हैं और छुट्टियों

में आते हैं। वैसे मेरी क्लास की लड़कियाँ इतनी भी बेवकूफ नहीं थीं। फिर भी कोई सीधे-सीधे मुझ से नहीं पूछता, कौन सी छुट्टियों में आते हैं? कब होती हैं तुम्हारे पापा की छुट्टियाँ? बेला ने कितनी आसानी से कहा था मुझे, झूठ बोलने की क्या जरूरत है।

जो सच है वह बोलो। कहो पापा ने दूसरी शादी कर ली और तुम्हारी ममा से तलाक ले लिया। इसमें छुपाने वाली बात क्या है। तुम्हारी ममी तो अलग नहीं हुई न उनसे। वह गए तुम लोगों को छोड़ कर। मैं कैसे कहूँ बेला से, इतनी हिम्मत न मेरी ममा में है न मुझमें। तभी तो उन्होंने मुझे हॉस्टल भेज दिया था पढ़ने। और देखो मैं नौकरी कर रही हूँ तब भी हॉस्टल में ही हूँ। वह खुद दूसरे शहर चली गई जॉब करने। हमारा कोई घर भी नहीं है। जब मिलना होता है मैं नानी के यहाँ जाती हूँ, ममा वही आती हैं मुझसे मिलने। कभी उस शहर में नहीं बुलातीं जहाँ नौकरी करती हैं। मुझे ऐसा लगता है उन्होंने बताया ही नहीं होगा किसी को कि उनकी एक बेटी भी है। मैं बेला से कहना चाहती हूँ। बेला मैं तुम्हारी तरह होना चाहती हूँ। इतनी साफगोई से सब स्वीकार करने वाली, इतनी साफगोई से सब कहने वाली।"

किसी भी माँ को गर्व होना चाहिए अपने बच्चे की तारीफ सुन कर। शायद पढ़ कर भी। सोनाली बेला से इतना प्रभावित थी। उसके हर शब्द में यह झलक रहा था। लेकिन मेरा ध्यान उन रेखाओं की तरफ है, जिनसे जोड़ कर उसने एक झोंपड़ी बना दी। रास्ता भी बनाया लेकिन एक दरवाजा है उस रास्ते पर जो बंद है। प्रदीप कहता था, जो लोग रास्ते पर गेट बना देते हैं वे अपने जीवन में किसी को आसानी से अंदर नहीं आने देते। उनके मन में एक परिवार की हसरत तो होती है लेकिन वे इतने सावधान होते हैं कि कम ही लोग उनके करीब पहुँच पाते हैं। वे अपने स्वभाव और इच्छा में तालमेल नहीं बैठा पाते और अकेले रह जाते हैं। सोनाली क्या ऐसे ही किसी तालमेल की वजह से...। मैं हमेशा सोचना वहीं क्यों रोक देती हूँ जहाँ बेला कहीं भी उससे जुड़ रही होती है।

उसकी डायरी में फूल हैं, फूल के गुच्छे भी। एक फूल पर उसने तितली भी बनाई है। यह तब की बात है जब बेला को उसके साथ रहते हुए साल भर हो गया था। फूल और उस पर तितली बनाना तो प्रेम और खुद को किसी को समर्पित कर देने का संकेत है। तो क्या समर्पण भले ही अप्राकृतिक हो भावनाएँ एक सी होती हैं। क्या प्रेम देह-देह का फर्क नहीं जानता। एक पुरुष और स्त्री देह के अंतर को मन नहीं पहचानता। जरूर ऐसा होता नहीं होगा। तभी तो प्रेम के इतने चिह्न उसने अंकित कर रखे हैं। कुछ दिन तो जरूर दोनों के बीच उल्लास के बीते होंगे। उसने सितारे बनाए हैं खूब सारे। कोमल पत्तियाँ बनाई हैं। खूबसूरत अल्पना बनाई है। सभी तो नए जीवन के शुरुआत के संकेत

हैं। वह जब मुझे चूमती है तो लगता है मैं हवा में उड़ रही हूँ। उसके कोमल हाथ जब मेरे शरीर को छूते हैं तो... मुझे यह पढ़ना ही लिजलिजा अनुभव दे जाता है। उबकाई आती है। आगे पढ़ने का मन नहीं करता। यकीन नहीं होता मेरी बेटी ने किसी लड़की के साथ... और फिर आराम से उसे छोड़ कर चली आई। वह उसकी याद का नरक भोगती रही और मेरी बेटी आराम से शादी कर अपनी नौकरी में व्यस्त हो गई। अखबारों में कभी सतरंगी मुखौटे पहने लोगों को देख कर मैंने उससे पूछा था, यह किस बात का प्रदर्शन है बेटा। बड़े अजीब से लग रहे हैं। तुम नहीं समझोगी माँ। बस ऐसे ही।

अब याद करती हूँ तो लगता है उसकी आवाज किसी खोह से आती हुई लगी थी। फिर भी पता नहीं कैसे मैंने दोबारा पूछ लिया था। जो लड़के-लड़के, लड़कियाँ-लड़कियाँ शादी कर लेती हैं न ये सब वो लोग हैं। शादी जितने आश्चर्य से मैंने पूछा था उतनी ही सहजता से उसने कहा था, हाँ तो क्या। शहरों में सब चलता है। बहुत सी लड़कियों को लगता है वो अपनी सहेली के साथ ही रह सकती हैं। होती हैं कुछ पगली टाइप की। मैं कुछ और पूछती उससे पहले ही वह उठ कर दूसरे कमरे में चली गई थी। मुझे पता ही नहीं चला कि वह अतीत का सामना करना नहीं चाहती थी या पुरानी बातें उसके भी जख्म हरे कर रही थी। फटी पुरानी वह डायरी मेरे गद्दे के नीचे कसमसा रही थी। उसका रोना, बेला से साथ रहने की गुहार, उसे न भूल पाने की विनती। सब साफ-साफ मुझे दिखाई पड़ रहा था। मैंने बेला का चेहरा याद करने की कोशिश की जब वह शादी के लिए अपना वर्किंग वुमन हॉस्टल छोड़ कर लौटी थी। मुझे याद ही नहीं पड़ता कि उसके चेहरे पर मैंने कोई बैचेनी या शिकन पढ़ी थी। वह जहाँ नौकरी करती थी वहीं विनीत से उसकी दोस्ती हुई थी और शादी। कुछ भी असामान्य नहीं था उसके जीवन में। डायरी के आखिरी पन्नों पर कुछ नहीं लिखा था। बस खूब सारी आँखें बनी हुई थीं। खूब सारी। इंतजार का प्रतीक पता नहीं कितनी जोड़ी आँखें। कहीं कोई चेहरा नहीं। बस आँखें बड़ी-बड़ी कजरारी सी लेकिन उदास।

लगता था उसके शब्द चुक गए हैं। उसकी इच्छा खत्म हो गई है। उसने अपने मन को मार लिया है। कोई चित्र नहीं, कोई गोदना नहीं। बस दो पंक्तियाँ लिखी थीं लाल स्याही से, भूले हैं रफ्ता-रफ्ता मुद्दतों में उन्हें हम... किस्तों में खुदकुशी का मजा हमसे पूछिए।